एंटीबायोटिक के खतरे

देश में लापरवाह तरीके से एंटीबायोटिक दवाओं के बढ़ते सेवन से रोगाणुओं में प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती जा रही है. इस कारण बीमारियों की गंभीरता भी बढ़ रही है और दवाएं भी बेअसर हो रही हैं. हालांकि, ऐसा पूरी दुनिया में हो रहा है, पर भारत इससे ज्यादा प्रभावित है. पेंसिलीन की खोज करके मानवता को रोगों से लड़ने के लिए सक्षम बनानेवाले एलेक्जेंडर फ्लेमिंग ने 1945 में नोबेल पुरस्कार ग्रहण करते हुए कहा था कि एक दिन ऐसा भी आयेगा, जब यह किसी भी दुकान से खरीदा जा सकेगा और कोई अज्ञानी इसका सेवन कर रोगाणुओं को प्रतिरोधक बना देगा. आज उनकी आशंका सच हो रही है. हमारे देश में स्वास्थ्य केंद्रों की कमी और नीम हकीमों की भरमार के कारण एंटीबायोटिक के खतरे अधिक चिंताजनक हैं. चिकित्सक की सलाह के बिना दवाएं लेने का चलन भी भारत में कुछ अधिक ही है. 'सुपर बग' के नाम से चिह्नित प्रतिरोधक क्षमता से लैस बैक्टीरिया अस्पतालों, मिट्टी और पानी तक में पहुंच गये हैं और इनमें से कई पर किसी भी दवा का कोई असर नहीं होता. इनके प्रसार का सबसे ज्यादा शिकार बच्चे हो रहे हैं. पिछले वर्ष जारी अध्ययनों में बताया गया था कि दुनियाभर में करीब सात लाख बच्चे सालाना ऐसे बैक्टीरिया के कारण मारे जाते हैं, जिनमें 58 हजार भारत के हैं. साल 2000 से 2015 के बीच वैश्विक स्तर पर इनके उपभोग में 65 फीसदी की बढ़त हुई है. निम्न और मध्य आयवर्गीय देशों में यह बढ़ोतरी 114 फीसदी रही है, जबकि भारत में यह आंकड़ा 103 फीसदी है. इस पृष्ठभूमि में हमारे देश के सामने अनेक चुनौतियां हैं. भारत महत्वपूर्ण दवाओं का एक प्रमुख निर्माता देश है. इनके कारखानों से निकलनेवाले कचरे से भी बैक्टीरिया नदी-नाले के जरिये फैल रहे हैं. स्वास्थ्य सेवाओं के अभाव के कारण एंटीबायोटिक की सही मात्रा देने और प्रतिरोधक बैक्टीरिया पर रोक लगाने में मुश्किलें आ रही हैं. चिकित्सकों की बड़ी संख्या नये शोधों और निर्देशों से अनजान रहती है. अक्सर ऐसे मामले भी सामने आये हैं, जब एंटीबायोटिक की कम खुराक कारगर नहीं होती, तो चिकित्सक उसकी मात्रा बढ़ाते जाते हैं. अच्छे अस्पतालों में भी साफ-सफाई की समुचित व्यवस्था न होने से 'सुपर बग' बैक्टीरिया सामान्य मरीज को भी खतरे में डाल सकता है. इन समस्याओं पर तुरंत ध्यान देने की जरूरत है. सरकारों और चिकित्सा संगठनों को पहल करनी चाहिए तथा लोगों में जागरूकता फैलाने की कोशिश करनी चाहिए. प्रदूषित हवा-पानी और खान-पान में पोषण की कमी से बीमारियां भी बढ़ रही हैं. इसलिए एंटीबायोटिक के बेमतलब सेवन और दवा-प्रतिरोधक रोगाणुओं पर अंकुश लगाना प्राथमिकता होनी चाहिए. यदि रोगों के प्रसार पर काबू पाने में कामयाबी मिलती है, तो विभिन्न योजनाओं में हो रहे सरकारी और निजी क्षेत्र में निवेश को बुनियादी स्वास्थ्य सेवाओं को विस्तार देने में लगाया जा सकता है.

प्रदूषित हवा-पानी और खान-पान में पोषण की कमी से बीमारियां भी बढ़ रही हैं. इसलिए एंटीबायोटिक के बेमतलब सेवन और दवा-प्रतिरोधक रोगाणुओं पर अंकुश जरूरी है.

बिना गठबंधन की एकता

नवीन जोशी
वरिष्ठ पत्रकार
naveengjoshi@gmail.com

बीती 19 जनवरी को ही वे सब कोलकाता में एक मंच पर इकट्ठा हुए थे. ममता बनर्जी की बुलायी रैली के मंच से उन सबने मोदी के नेतृत्व वाले एनडीए को केंद्र की सत्ता से उखाड़ फेंकने का आह्वान किया था. रविवार को कोलकाता में नाटकीय घटनाक्रम के बाद एक बार फिर वे मिल कर मोदी सरकार को कोसने, उसे लोकतंत्र, संघीय स्वरूप और संवैधानिक संस्थाओं को नष्ट करनेवाला बताने में कोई कसर नहीं छोड़े. वे सब ममता बनर्जी के पीछे खड़े होकर मोदी के खिलाफ एकजुट दिखने की कोशिश कर रहे हैं.

पिछले डेढ़-दो साल से ऐसी ही स्थिति बनी हुई है. कांग्रेस समेत भाजपा विरोधी कई क्षेत्रीय दल 2019 के आम चुनाव में मोदी को परास्त करने के लिए एकजुट होने की कोशिश करते रहे हैं. महागठबंधन बनाने की चर्चाएं जब-तब होती रहीं. विपक्षी नेताओं के दिल्ली डेरों से लेकर प्रांतीय राजधानियों के सरकारी बंगलों तक बैठकों के दौर चलते रहे. महागठबंधन बनाने की पहली बड़ी कोशिश लालू यादव की पहल पर डेढ़ साल पहले पटना रैली में हुई थी. उत्तर प्रदेश के दो धुर-विरोधी दलों, सपा और बसपा के एक साथ आने की जमीन उसी पहल से बननी शुरू हुई थी. पटना रैली से बड़े-बड़े एलान हुए थे. उसके बाद से महागठबंधन बनने की चर्चाओं को गति मिली थी, हालांकि क्षेत्रीय दलों के अंतर्विरोधों ने उसकी संभावनाओं पर सवाल भी खूब लगा दिये थे.

विपक्षी दलों को एक और बड़ा अवसर मई 2018 में मिला, जब कर्नाटक चुनाव में भाजपा सत्ता कब्जाने में नाकाम हुई और कुमारस्वामी के नेतृत्व में कांग्रेस-जनता दल (सेकुलर) की सरकार बनी. कुमारस्वामी का शपथ ग्रहण समारोह भाजपा के खिलाफ विपक्षी दलों का बड़ा जुटान बना. वह मंच विपक्षी नेताओं के लिए न केवल उत्साहवर्धक था, बल्कि एकता के प्रतीक रूप में कुछ अद्भुत दृश्य बहुत दिनों तक मीडिया में छाये रहे थे.

सोनिया और मायावती की स्नेहिल आलिंगन वाली बहुप्रचारित तस्वीर बेंगलुरु के उसी मंच की है. लग रहा था कि मायावती का पुराना कांग्रेस विरोध अब तिरोहित हो जायेगा. उसी मंच पर सपा अध्यक्ष अखिलेश यादव ने बसपा नेता मायावती का बड़े आदर से स्वागत किया था. पटना से सांकेतिक रूप में शुरू हुई उनकी दोस्ती उसी दिन सार्वजनिक हुई थी. बेंगलुरु के उसी मंच पर बंगाल के पुराने राजनीतिक शत्रु माकपा नेता सीताराम येचुरी और तृणमूल कांग्रेस की ममता बनर्जी भी मौजूद थीं. एक-दूसरे को फूटी आंख न देखनेवाले ये नेता उस दिन मुस्कराते हुए आमने-सामने भी हुए. वहां और भी क्षेत्रीय नेता थे, जिनका जोश बता रहा था कि उन्हें भाजपा को सताच्युत करने के लिए एकता का सूत्र मिल गया है.

जिस तरह पटना की रैली के बाद महागठबंधन की संभावना धूमिल होती गयी, उसी तरह बेंगलुरु के विपक्षी जमावड़े से निकले एकजुटता के संदेश भी जल्दी से उलटे संकेत देने लगे. सोनिया गांधी के गलबहियां डालनेवाली मायावती कांग्रेस पर हमलावर होती गयीं. राजस्थान, मध्य प्रदेश और छत्तीसगढ़ के चुनावों में तालमेल न हो पाने के बाद मायावती के लिए कांग्रेस 'सांपनाथ' हो गयी. माकपा और तृणमूल को तो खैर साथ आना ही नहीं था, सोनिया से ममता की बाद की मुलाकातें भी सुनिश्चित नहीं कर सकीं कि उनकी पार्टियों में तालमेल होगा.

> किसी संयुक्त मोर्चे या गठबंधन के बिना भी भाजपा विरोध के स्वर तीव्र हो रहे हैं. विपक्ष इन विरोधी सुरों को तेज बनाये रखना चाहता है. फिलहाल यही स्वर उनकी एकजुटता है.

इन रैलियों, मुलाकातों का विपक्ष की नजर से एक ही सुखद परिणाम निकला कि उत्तर प्रदेश में सपा-बसपा का गठबंधन हो गया. भाजपा को हराने की दिशा में यही एक महत्वपूर्ण बात हुई. इसके अलावा टीआरएस नेता चंद्रशेखर राव और तेलुगु देशम के चंद्रबाबू नायडु ने विपक्षी एकता की जो पहल की, वह किसी नतीजे तक नहीं पहुंची. तेलंगाना में तेलुगु देशम, कांग्रेस और वाम दलों ने मिल कर चुनाव लड़ा, लेकिन नाकामयाब रहे. इस प्रयोग की विफलता के बाद कांग्रेस अब तेलुगु देशम से दूरी बना रही है. संकेत हैं कि वह आंध्र में उसके साथ मिल कर लोकसभा चुनाव नहीं लड़ेगी.

अपने अंतरविरोधों, क्षेत्रीय समीकरणों और कांग्रेस से पुराने बैर के कारण अब तक भाजपा विरोधी दल राष्ट्रीय स्तर पर किसी एकता का आधार तैयार नहीं कर सके. आम चुनाव सामने है. कोई गठबंधन बन पायेगा, इसके आसार नहीं दिखते. इसके बावजूद इन दलों में 2019 के चुनाव में भाजपा को धूल चटाने की तीव्र लालसा दिखती है. सबको अपने राजनीतिक अस्तित्व के लिए भाजपा ही बड़ा खतरा दिख रही है. इसलिए वे एकजुटता दिखाने, एक मंच पर आने और भाजपा-विरोध के लिए सामूहिक मुद्दा तलाशने का कोई भी मौका नहीं छोड़ना चाहते हैं.

ममता बनर्जी की विपक्षी रैली को एक महीना भी नहीं हुआ कि विपक्षी दलों के लिए कोलकाता फिर एक ऐसा अवसर ले आया, जब वे मिल कर मोदी सरकार के खिलाफ अपनी एकजुटता दिखा सकते थे. सारधा घोटाले के सिलसिले में वहां के पुलिस कमिश्नर से पूछताछ करने सीबीआइ क्या पहुंची, ममता बनर्जी ने मोदी सरकार के खिलाफ नया मोर्चा खोल दिया. वह 'संघीय ढांचे को ध्वस्त करने' का आरोप लगाकर धरने पर क्या बैठीं कि पूरा विपक्ष ममता के समर्थन में और मोदी सरकार के विरुद्ध एक सुर में बोलने लगा. कई दलों के बड़े नेता कोलकाता जाकर उनके धरना-मंच में शरीक हो आये और कई ने अपने गढ़ से ही मोदी सरकार के खिलाफ हुंकार भरी.

करीब बाईस राजनीतिक पार्टियां मोदी सरकार के खिलाफ और ममता बनर्जी के समर्थन में इस समय बयान दे रही हैं. इनमें कांग्रेस समेत विभिन्न राज्यों के बड़े दल शामिल हैं. ममता के मामले में बीजू जनता दल ने भी भाजपा विरोधी तेवर दिखाये हैं. लगता है कि भाजपा के विरुद्ध व्यापक मोर्चा तैयार है, लेकिन वास्तव में कोई मोर्चा तैयार नहीं है. ममता के पक्ष में खड़े सारे नेता उन्हें अपना नेता मानने को कतई तैयार नहीं होंगे.

इस तथ्य के बावजूद भाजपा के लिए 2019 का संग्राम आसान नहीं है. उत्तर प्रदेश में कांग्रेस के अलग मैदान में उतरने के बावजूद सपा-बसपा के गठबंधन से लड़ाई बहुत कठिन हो चुकी है. बिहार में नीतीश के कारण एनडीए मजबूत भले दिखता हो, विरोधी गठबंधन को कमजोर नहीं आंकना चाहिए. इसके अलावा कुछ राज्यों में भाजपा की कांग्रेस से सीधी लड़ाई है और उन राज्यों में 2014 के बाद से कांग्रेस मजबूत हुई है. किसी संयुक्त मोर्चे या गठबंधन के बिना भी भाजपा विरोध के स्वर तीव्र हो रहे हैं. विपक्ष इन विरोधी सुरों को तेज बनाये रखना चाहता है. फिलहाल यही स्वर उनकी एकजुटता है.

पर्याप्त नहीं यह रक्षा बजट

सुशांत सरीन
रक्षा विशेषज्ञ
delhi@prabhatkhabar.in

पिछले कई साल से बजट में हर बार रक्षा बजट के सबसे ज्यादा होने की बात तो आती है, लेकिन यह आकलन भी सामने आता है कि रक्षा के लिए वह बजट नाकाफी होता है. पिछले कई वर्षों से ऐसा होता चला आ रहा है. पूर्व प्रधानमंत्री राजीव गांधी के कार्यकाल में सबसे ज्यादा रक्षा पर खर्च हुआ था, लेकिन उसके बाद की सरकारों में रक्षा बजट जरूरत से कम ही रहा है.

यह बात सही नहीं है कि इस बार का रक्षा बजट अब तक का सबसे बड़ा है, बल्कि हर साल का रक्षा बजट अपने पिछले साल के मुकाबले कुछ ज्यादा ही रहता है. यह तो एक परंपरा है. अगले साल का बजट इस बार से भी ज्यादा हो जायेगा. इसमें कोई चौंकानेवाली बात नहीं है. हालांकि, इस बार रक्षा बजट पहली दफा तीन लाख करोड़ रुपये के पार भले ही चला गया हो, लेकिन फिर भी यह नाकाफी है. क्योंकि सवाल बजट के बड़ा होने का नहीं है, बल्कि पर्याप्त होने का है.

रक्षा बजट के कुछ पैमाने होते हैं. एक तो यह कि राष्ट्रीय जीडीपी का वह कितना प्रतिशत है. पिछले 12-15 साल से यह प्रतिशत निरंतर गिरता जा रहा है. अमेरिका अपनी जीडीपी का छह प्रतिशत रक्षा पर खर्च करता है, तो पाकिस्तान भी ढाई से तीन प्रतिशत खर्च करता है. चीन भी लगभग इतना ही खर्च करता है. वहीं भारत रक्षा बजट कम करते-करते अब 1.6 प्रतिशत खर्च पर आ गया है. यानी हमारी जीडीपी तो बढ़ रही है, लेकिन उस हिसाब से रक्षा बजट कम हो रहा है. इस एतबार से देखें, तो अब तक का यह सबसे कम रक्षा बजट माना जायेगा. हालांकि, इसका कोई पैमाना नहीं है कि जीडीपी के आकार में रक्षा बजट कितना होना चाहिए, तो कुछ विशेषज्ञ मानते हैं कि यह तीन प्रतिशत से कम नहीं होना चाहिए. जाहिर है, यह देखना होता है कि रक्षा संबंधी चुनौतियां कितनी बड़ी या छोटी हैं. भारत की चुनौतियों के हिसाब से मौजूदा रक्षा बजट पर्याप्त नहीं है. यह बेहद अफसोस की बात है.

महत्वपूर्ण बात यह है कि भारत ने रक्षा साजो-सामान बनाने के लिए अपनी कोई बड़ी व्यवस्था नहीं बनायी है, इसलिए भारत को हथियार और साजो-सामान निर्यात करना पड़ता है. साजो-सामान निर्यात करने के इतने सख्त और लंबी प्रक्रिया होती है कि भारतीय सेना के पास सामान आते-आते उसकी तकनीक पुरानी पड़ जाती है. पहले सरकार यह तय करती है कि सेना को क्या चाहिए, लेकिन उसका निर्यात करने के लिए जब ऑर्डरिंग-टेंडरिंग होती है, तो यह प्रक्रिया बहुत लंबी यानी कुछ साल तक खिंचती चली जाती है. इसका बेहतरीन उदाहरण राफेल सौदा है, जिसे खरीदने का मामला तकरीबन डेढ़ दशक पुराना है.

हमारे पड़ोस में जिस तरह की अस्थिरता का माहौल बना हुआ है, उसमें हमारी चुनौतियां बहुत ज्यादा हैं. इन चुनौतियों के लिए हमारे खर्च भी ज्यादा होने चाहिए, जो कि नहीं हैं. हर बजट में सरकार एक लाइन डाल देती है कि अभी इतना रक्षा बजट है, जरूरी पड़ी तो इसे बढ़ाया भी जा सकता है. इसका मतलब साफ है कि सरकार को पता है कि रक्षा बजट को बढ़ाये जाने की जरूरत है, लेकिन वह बढ़ायेगी नहीं. सरकार यह कब समझेगी कि रक्षा साजो-सामान के लिए बाद में बजट बढ़ाने का कोई औचित्य नहीं है, क्योंकि यह राशन बजट नहीं है. मान लीजिए कि आपके घर में आटा या चावल कम हो जाये, तो आप फौरन बोलेंगे कि अभी बाजार से लेकर आते हैं, तब खाना बनेगा, लेकिन जरा सोचिए, अगर हमारे दुश्मन यलगार कर दें और हमारे पास लड़ने के लिए हथियार और साजो-सामान नहीं होंगे, तो दुश्मन से क्या आप यह कहेंगे कि भई रुको अभी हम हथियार खदी कर आते हैं, तब लड़ेंगे? सरकार को यह क्यों नहीं समझ में आता कि उसे अपना घर सुरक्षित रखने के लिए पर्याप्त मात्रा में हथियार और साजो-सामान होना चाहिए!

प्रतिदिन आधुनिक होते समय में जिस तरह की तकनीकें विकसित हो रही हैं, वे एक तरफ चुनौतियों को बढ़ा रही हैं, तो दूसरी तरफ सैन्य साजो-सामान के अत्याधुनिक होने की मांग भी कर रही हैं. दरअसल, एक खास तरह का गलत ट्रेंड हमने देखा है कि हमारी कोशिश यह रही है कि सैनिकों की भर्तियां करते रहो, यानी ज्यादा बड़ी सेना हो, लेकिन यह सोच नहीं रही है कि इतनी बड़ी सेना आखिर लड़ेगी कैसे, जब उसके पास आधुनिक हथियार पर्याप्त मात्रा में नहीं होंगे? भारतीय सेना में बहुत सारे उपकरण वर्षों पुराने हैं और इसे आधुनिक उपकरण मुहैया कराना सख्त जरूरी है. इसके लिए हमें अपनी जीडीपी का ढाई से तीन प्रतिशत खर्च करना होगा, जो कि अभी संभव नहीं दिख रहा है.

रक्षा बजट को लेकर फैसले लेनेवाले लोगों में नीतियों का अभाव दिखता है. अभी जो रक्षा बजट पास हुआ है, एक आकलन के मुताबिक, इसका करीब अस्सी प्रतिशत तो सैन्य उपकरणों की देख-रेख, सैनिकों की तनख्वाह और रोज के जरूरी खर्चों व ट्रेनिंग आदि में ही खत्म हो जाता है. इसमें कोई शक नहीं कि भारतीय सैनिक जोशीले हैं, लेकिन लड़ाई के मैदान में सिर्फ जोश से नहीं लड़ा जा सकता, उसके लिए हथियार भी चाहिए. सैनिकों का मनोबल आधुनिक हथियारों से बढ़ता है. सेना पर ज्यादा खर्च हमारी अर्थव्यवस्था के लिए भी जरूरी है, क्योंकि अगर आधुनिक हथियारों से लैस सीमा पर खड़ी सेना से देश के लोग सुरक्षित महसूस करते हैं, तो वे देश के भीतर ज्यादा जोश से काम करते हैं और देश तरक्की की राह पर चल पड़ता है.

(वसीम अकरम से बातचीत पर आधारित)

> भारतीय सेना में बहुत सारे उपकरण वर्षों पुराने हैं और इसे आधुनिक उपकरण मुहैया कराना सख्त जरूरी है. इसके लिए हमें अपनी जीडीपी का ढाई से तीन प्रतिशत खर्च करना होगा, जो कि अभी संभव नहीं दिख रहा है.

बोधि वृक्ष

नित्य अर्थात शाश्वत

जब परमपुरुष स्वयं अपने में मस्त रहते हैं, तो वे जिस आनंद या परमानंद का अनुभव करते हैं, उसे 'नित्यानंद' कहते हैं. 'नित्य' अर्थात् 'शाश्वत'. उनके लिए बाह्य आनंद अर्थहीन है, क्योंकि सब कुछ उनके अंदर ही है. जब वे स्वनिर्मित जीवों से सुख और दुख का खेल खेलते हैं, तो उसे ही 'लीलानंद' कहा जाता है, उसे अन्य कुछ नाम देना संभव नहीं है. यह एक नाटक के समान है, जिसमें कुछ दुखी होते हैं और कुछ सुखी. नाटक की तरह परमपुरुष ने उन सभी पात्रों से सुख-दुख का खेल खेलना प्रारंभ किया. यह सब उनके लिए मात्र एक नाटक है. यदि नाटक के पात्र भी यही सोचें कि 'मैं मात्र एक नाटक कर रहा हूं', तो वे सुख-दुख से परे रहेंगे. किंतु इस विश्व नाटक मंच पर जो जीव नाटक में भाग ले रहे हैं, वे भूल जाते हैं कि वे मात्र एक पात्र हैं और उनका वास्तविक घर कहीं और है तथा यह विश्व मात्र एक रंगशाला है, जहां से लौटकर उसी घर में जाकर कढ़ी-भात खाना है. इसके परिणामस्वरूप वे कभी अत्यधिक 'सुख' या कभी अत्यधिक 'दुख' का अनुभव करते हैं. कभी अत्यधिक सुखबोध के कारण वे असंतुलित हो जाते हैं- अपनी सहज बुद्धि खो बैठते हैं. ऐसा इसलिए होता है कि वे यह भूल जाते हैं कि वे एक नाटक का एक पात्र भर हैं. नाटक में कोई दुख का अभिनय करता है और कोई सुख का. यदि साधकगण इस तथ्य से अवगत रहें कि वे मात्र एक रंगकर्मी हैं, तब न तो सुख से प्रभावित होंगे और न ही दुख से. 'आनंद या परमानंद से ही इस जगत की रचना हुई- वे सभी आनंद में ही रह रहे हैं और अंततः उसी परमानंद में ही मिल जायेंगे.' इस प्रकार संपूर्ण अस्तित्व का स्रोत आनंद है. सब नित्यानंद से उत्पन्न होता है, लीलानंद में स्थित रहता है और अंततः नित्यानंद में पुनः वापस चला जाता है. भक्त कहते हैं- मैं हूं और मेरे भगवान हैं और भगवान की लीला से हमें परमानंद की प्राप्ति होती है. जो सचमुच भक्त हैं, उनकी इच्छा यही रहती है कि वे जीवन का अंत होने पर परमपुरुष से मिल जायें- उनसे मिल कर एक बन जायें.

श्रीश्री आनंदमूर्ति

आपके पत्र

बंगाल से उठा संवैधानिक संकट

सीबीआइ के अधिकारियों के साथ हुए दुर्व्यवहार की घटना निंदनीय है. पश्चिम बंगाल में धरने पर बैठे मंत्रिमंडल को यह अवश्य ज्ञात होनी चाहिए कि सीबीआइ को जांच के आदेश सुप्रीम कोर्ट से ही प्राप्त हुए हैं. सीबीआइ जैसी संवैधानिक इकाई अगर स्वतंत्र रूप से कार्य कर रही है, तो राज्य द्वारा इस प्रकार विरोध करना संघीय ढांचे के खिलाफ है, जो भविष्य में संवैधानिक संकट उत्पन्न कर सकता है. कुछ वर्षों पहले जब यूपीए की सरकार केंद्र में थी, तब गुजरात के तत्कालीन मुख्यमंत्री रहे नरेंद्र मोदी ने कभी उसका विरोध नहीं किया, बल्कि जांच में सहयोग करते रहे. पश्चिम बंगाल सरकार को समर्थन देने वाले महागठबंधन के सभी दलों को एक बार अवश्य सोचना चाहिए और राजनीतिक भावनाओं से ऊपर उठ कर भ्रष्टाचार पर एकजुट होना चाहिए. अगर कोई दोषी है, तो वह किसी भी पद पर हो, सजा अवश्य मिलनी चाहिए. तभी भारत एक सशक्त देश बन पाने में समर्थ होगा.

कन्हाई लाल, रांची

सरकार में पारदर्शिता का अभाव

वर्तमान केंद्र सरकार खुद को औरों से अलग होने का दावा डंके की चोट पर करती है. व्यवस्था बदलने और भ्रष्टाचार खत्म करने की बात करती है. अब तो उसके कार्यकाल का कुछ ही समय बचा है. अब तक लोकपाल की नियुक्ति के दिशा में कुछ नहीं किया गया. एक आरटीआइ से ज्ञात हुआ है कि वित्त मंत्रालय ने कालेधन पर उन तीन रिपोर्टों को सार्वजनिक करने से मना कर दिया है, जिनमें भारतीयों के देश के भीतर और विदेशों में कालाधन से जुडी जानकारियां हैं. सरकार कह रही हैं कि चूंकि इस समय इन प्रतिवेदनों की जांच एक संसदीय समिति कर रही है, इसलिए इसे सार्वजनिक करना समिति के विशेषाधिकार का हनन होगा. वहीं, ऐसा नहीं लगता कि देश में पंजीकृत एक भी राजनीतिक पार्टी यह मांग करेगी कि इन रिपोर्टों को जनता के सामने पेश किया जाए, जबकि इस मामले में पारदर्शिता जरूरी है.

जंग बहादुर सिंह, गोलपहाड़ी, जमशेदपुर

कैंसर से लड़ाई में प्रकृति की ओर लौटना ही होगा

पूरे विश्व में कैंसर के मामले बढ़ रहे हैं. इससे निबटने के लिए जागरूकता तो बेहद जरूरी है ही, साथ ही प्रकृति से जुड़ाव भी अहम हैं. सिर्फ जागरूकता से ही बात नहीं बनेगी. वरना क्या कारण हैं कि देश में सबसे ज्यादा साक्षरता दर वाले केरल राज्य में कैंसर के सर्वाधिक मामले पाये गये हैं? वहीं, कम साक्षरतावाले राज्य बिहार-झारखंड में कैंसर के मामले काफी कम पाये गये हैं? वैज्ञानिकों द्वारा भी सिद्ध किया गया हैं कि प्रदूषण बढ़ने के साथ-साथ कैंसर के मामलों में भी बढ़ोतरी हो रही हैं. डॉक्टरों का कहना हैं कि इससे बचाव के लिए स्वच्छ आबोहवा बेहद जरूरी हैं. प्रकृति से खिलवाड़ का नतीजा हमारे सामने हैं. पैसे बेहद जरूरी हैं, पर स्वास्थ्य की कीमत पर तो बिल्कुल ही नहीं. पैसों से तो हम महंगी दवाइयां खरीद सकते हैं, पर स्वास्थ्य नहीं.

सीमा साही, बोकारो

कुछ अलग

हरी साड़ी पर पीली छींटें!

मिथिलेश कु राय
युवा रचनाकार
mithileshray82@gmail.com

कल की बात है. कक्का कहने लगे कि सरसों में फूल आने लगे हैं. वसंत आ गया है! उनका चेहरा खिल उठा था. वह हौले-हौले मुस्कुराने लगे. मैंने उनकी आंखों में झांका, वहां मुझे एक उम्मीद नजर आ रही थी. कक्का कह रहे थे कि वसंत सच में राजा होता है. मौसम का राजा. इसके आते ही जन-जन प्रसन्नता और उल्लास से भर जाते हैं.

गेहूं के पौधे जवान नजर आने लगे हैं. उनमें बालियां निकल रही हैं. यह देख कर किसका मन आनंदित नहीं होगा. जिस फसल में लोग जाते अगहन से ही लगे हुए हैं, जिसके लिए लोग पूस में पानी से खेल गये, उसमें अब माघ में फूल और दाने निकल रहे हैं. मेहनत और आस से बोये गये बीजों में जब अंकुर फूटता है, लोग तो तभी मुदित हो जाते हैं, लेकिन जब उनमें फूल लगते हैं, तो मन झूम-झूम उठता है. है न!

दो-तीन महीने पहले बोये गये बीज अब तक घनी फसल के रूप में आ गये थे और ऐसा लग रहा था कि फूलों ने और उसकी गंध ने पूरे गांव को घेर लिया है. सरसों के पीले-पीले फूल इन हरे दृश्यों पर ऐसा लग रहा था, जैसे धरती ने हरे रंग की साड़ी पहन ली हो, जिस पर पीले रंग की छींटें हैं! यह सब किसी जादू जैसा लग रहा है, जो हकीकत है! हवा के झोंकों के मिजाज बदल गये हैं. बस्ती से दूर बांसों के झुरमुट में जहां चिड़ियों का बसेरा है, कलरव के स्वर ज्यादा गूंजने लगे हैं. लोग किसी भी ओर देखते हैं, तो उनकी आंखों को वहां कुछ खटकता नहीं. दृश्यों को निहार कर आंखें तृप्त नजर आती हैं.

कक्का को कुछ याद आ गया. वह कहने लगे कि वसंत आने पर दृश्यों में फूल लटक जाते हैं. फूल के कुछ मायने होते हैं. जिन फूलों के मायने सिर्फ फूल ही होते हैं और उनमें किसी भी तरह के फल नहीं लगते, वसंत उनके भरोसे नहीं आता. वह कह रहे थे कि वसंत के आने का मतलब फसल के फूलों से होता है. फूल खिलने का मतलब परिश्रम से बनता है. तीन महीने के लगातार परिश्रम से जब पौधों में फूल लगते हैं, तो वह असल में परिश्रम की सार्थकता की घोषणा जैसा होता है. वसंत सिर्फ एक मौसम का नाम नहीं है, वसंत एक संदेशवाहक का नाम है, जो फूलों के माध्यम से परिश्रम के फल का संकेत देता है.

कक्का कह रहे थे कि वसंत का चेहरा अगर इतना सुंदर है, तो यह मटर में आये फूलों का कमाल है. राजमा के पौधे में खिल रहे फूलों का कमाल है. खेसारी के नीले-नीले फूलों का कमाल है. उसके चेहरे में मक्के और गेहूं के पौधे की हरियाली का असर है. वसंत आते हुए इन सब में फूल भर कर अपने आप को खुशनशीब कर रहा है. वह जाते-जाते इन्हें दाने से भर देगा. लोगों के चेहरे पर यही सोच कर खुशी पसर रही है. चिड़ियां इसलिए अधिक कलरव करती हुई फुदक रही हैं, क्योंकि वे जहां तक उड़ान भरती हैं, उन्हें दाने ही दाने आने की उम्मीद दिखायी देती है. हवा इसलिए झूम रही है, क्योंकि वह फूलों का रस लेकर टहल रही है. फसल, पेड़-पौधे और फूल-पत्तियां सब मिल कर ही इस धरती पर वसंत रचते हैं!

देश दुनिया से

बेहद जटिल है अफगान समस्या

अमेरिका के विशेष दूत जाल्मे खलिलजाद ने दो बिंदुओं, अफगानिस्तान से सेना की वापसी और तालिबान की यह प्रतिबद्धता, कि वह इस क्षेत्र में चरमपंथियों को पनाह नहीं देगा, पर आगे बढ़ने की बात कही है. कतर में तालिबान के प्रवक्ता ने दृढ़तापूर्वक यह बात कही है कि तालिबान सत्ता पर 'एकाधिकार' नहीं चाह रहा और उसका दृष्टिकोण समावेशी अफगानी दुनिया की है. वहीं दूसरी तरफ, अमेरिका के सम्मानित लोगों ने वैसे किसी भी ढांचे को खारिज कर दिया है, जिसमें संघर्ष विराम और तालिबान व काबुल सरकार के बीच प्रत्यक्ष बातचीत शामिल नहीं है. इस बीच, तालिबान ने काबुल सरकार से बातचीत खारिज कर दी है. वहीं कतर वार्ता से खुद को बाहर रखे जाने पर काबुल नाराज है. अफगान समस्या जटिल है और अफगानिस्तान में राजनीतिक, जातीय, सांप्रदायिक और वैचारिक चरित्रों के बीच गहरा विभाजन है. अफगानिस्तान, तालिबान या पख्तून से कहीं अधिक है. इस बात का धन्यवाद करना चाहिए कि 9/11 के बाद यहां गैर पख्तून पहले से कहीं ज्यादा मजबूत हुए हैं. इसी तरह, तालिबान शासन के समय हाशिये पर रहे शिक्षित वर्ग और महिलाओं की सामाजिक-आर्थिक उन्नति हुई है. वे सभी इसकी वापसी का विरोध करेंगे.

DAWN

कार्टून कोना

साभार : कार्टूनमूवमेंटडॉटकॉम

पोस्ट करें : प्रभात खबर, 15 पी, इंडस्ट्रियल एरिया, कोकर, रांची 834001, **फैक्स करें** : 0651-2544006,
मेल करें : eletter@prabhatkhabar.in पर ई-मेल संक्षिप्त व हिंदी में हो. लिपि रोमन भी हो सकती है